कुमुदिनीचन्द्र का सामाजिक मूल्यांकन

ममता

सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग), जानकी देवी मेमोरियल महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध सारांश

कवि और समाज दोनों का परस्पर गूढ सम्बन्ध रहा है। कवि की रचनाओं पर तत्कालीन संस्कृति, समाज इत्यादि का प्रभाव स्पष्टतया दिखायी देता है। किसी भी युग की सामाजिक जानकारी प्राप्त करने हेतु हमें काव्यों की सहायता लेनी पड़ती है। संस्कृत साहित्य में भी वैदिककाल से लेकर आधुनिक काल तक अनेंकों कवियों ने अनेकों सुप्रसिद्ध रचनाओं का प्रणयन किया है, जो उस समय के समाज की जानकारी देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। काव्यों के माध्यम से ही हम तत्कालीन समाज का मूल्यांकन कर पाते है। आधुनिक संस्कृत साहित्य में पण्डिता क्षमाराव, टी.गणपति शास्त्री, राधावल्लभ त्रिपाठी इत्यादि आधुनिक मनीषियों के द्वारा कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास इत्यादि विधाओं का प्रणयन किया गया, जो आधुनिक समाज की छवि को दर्शाती है। आधुनिक कवियों में बींसवी शताब्दी में उत्पन्न आचार्य मेधाव्रत द्वारा रचित उपन्यास 'कुमुदिनीचन्द्र' तत्कालीन समाज का वास्तविक स्वरुप दर्शाता है। इस शोधपत्र में कुमुदिनीचन्द्र में वर्णित समाज का मूल्यांकन करने की कोशिश की जायेगी।

कूट शब्द- योगीवेषधारी, ईश्वरनिष्ठा, विलासोद्यान, पत्नीव्रतधारी।

भूमिका

आधुनिक संस्कृत साहित्य में महाकवि मेधाव्रत प्रणीत सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'कुमुदिनीचन्द्र' कवि के पाण्डित्य को दर्शाता है। पंडित अम्बिकादत्त व्यास के द्वारा रचित 'शिवराजविजय' की अपेक्षा 'कुमुदिनीचन्द्र' अत्युत्कृष्ट श्रेणी का उपन्यास है। इस उपन्यास की कथा हिन्दी नाटक चन्द्रकान्ता से कुछ मिलती जुलती है। सरल संस्कृत भाषा में विरचित कुमुदिनीचन्द्र में कहीं पर भी अश्लीलता के दर्शन नही होते है। इसमें 'कुमुदिनीचन्द्र' नायिका तथा 'चन्द्रसिंह' नायक है। नायक-नायिका के नाम पर ही इसका नाम 'कुमुदिनीचन्द्र' रखा गया। आचार्य मेधाव्रत प्रकृति प्रेमी कवि है। इनकी सभी रचनाओं में प्रकृति का अलौकिक वर्णन प्राप्त होता है। कवि ने प्राकृतिक सौंदर्य के साथ-साथ अपनी रचनाओं में तत्कालीन समाज की छवि को भी उजागर किया है।

कुमुदिनीचन्द्र में वर्णित समाज -

नारीस्थिति -

किसी भी समाज का वर्णन करते समय महिलाओं की स्थिति को सर्वप्रथम दर्शाया जाता है। महिलायें समाज की आधारशिला होती है। 'कुमुदिनीचन्द्र' में महिलापात्र कुमुदिनी, रत्नप्रभा, विमला, प्रियंवदा, मालती, प्रभावती, चन्द्रप्रभा इत्यादि है। तत्कालीन समाज में महिलायें सुरक्षित नही थी। उस समय बलपूर्वक स्त्रियों का अपहरण कर लिया जाता था। उपन्यास की प्रथम कला में कुमुदिनी अपने अपहरण के विषय में योगीवेषधारी चन्द्रसिंह को बताती है कि-'जब मैं चंद्रवती नदी के तट पर भ्रमण कर रही थी, तभी मेरे सामने नीले वस्त्रों से आच्छादित शरीर वाले तीन पुरुष अचानक आ जाते हैं तथा शीघ्रता से मुझे पकड़ लेते हैं। जैसे ही मैं चिल्लाना शुरू करती हूँ, वे मेरे मुख पर कपड़ा बांध देते हैं।

ह्यस्तु चन्द्रवतीतरङ्गिणीतटोपवनान्निवर्तमानाया ममार्द्धवर्त्मनि नीलनिचोलावृतसकलशरीरा भीषणाकारा दुराचारास्त्रयो नराः सम्मुखीना अवर्तन्त। झटिति समुपसृत्य तैरहं जगृहे। यावदहमाक्रन्दितुं प्रावर्तिषि तावदेव तेषामन्यतमो मम मुखोपरि करमाधायाक्रन्दन्तीं मां न्यरुणत्।[1]

उसके बाद दुष्ट क्रूरसिंह कुमुदिनी का अपहरण करके उसे भयंकर वन में लाता है, जहाँ पर उसकी रक्षा योगीवेषधारी राजकुमार चन्द्रसिंह करता है - अपश्यश्चायं चन्द्रमसः प्रकाशे त्रिभिः पुरुषैरेका चतुर्दशवर्षकल्पा, श्रीरिव कल्पितावतारा रतिरिव-शरीरधारिणी मनोहारिणी सुकुमारी कुमारी तत्राऽऽनीताऽस्ति ।[2]

उपन्यास की चतुर्थी कला में भी अपहरण की जानकारी हमें प्राप्त होती है । प्रतिनायक क्रूरसिंह दुर्गनगर के सेठ की बहु का अपहरण करता है - दुष्टहतकः क्रूरसिहोंऽयमतीव नीचप्रकृतिरासीत्। एकदा तुरङमारुह्यासो नगराद् बहिः सरोवरतीरमगमत्त्पर्यटितुम्। दैवयोगेन तस्य सरसस्तीरेऽजितदुर्गनगरश्रेष्ठिनः स्नुषा स्वसखीभिः समं पर्यटन्ती समुपस्थिता। नयनगोचरीकृत्य तामयं क्रूरसिंहो मदनशरताडिताः सन्नपहर्तुं निश्चिकाय। तदनु तुरङ्गम् कशया प्रहृत्य धावमानेनैव वाजिना तस्या अन्तिकमुपगम्य तां तरुणीं निपुणतया पाणिनां गृहीत्वा हयपृष्ठमारोप्य पलायतासौ।[3]

उपन्यास में क्रूरसिंह कुमुदिनी पर कुदृष्टि रखता है। वह उसको प्राप्त करने हेतु उसका दो बार अपहरण करता है, परंतु कुमुदिनी देवी सीता की भांति अपने पतिव्रत धर्म पर अडिग रहती हैं। वह हर बार वह अपने सतीत्व की रक्षा करती है। उपन्यास में क्रूरसिंह से कुमुदिनी की रक्षा उसका पति चन्द्रसिंह करता है।

तत्कालीन समय में स्त्रियां पति को ही सभी कुछ मानती थी। सप्तमी कला में महाराज विजयसिंह की मृत्यु के बाद महारानी प्रभावती भी उनके साथ सती हो जाती है।[4] तत्कालीन समाज में स्त्रियां अपने पतियों को दुष्कर्म करने के बाद पश्चाताप होने पर क्षमा भी कर देती थी । उपन्यास की पंचदशी कला में जब विमला अपने पति क्रूरसिंह को क्षमा कर देती है, तब क्रूरसिंह उसका धन्यवाद करता है इस पर विमला कहती है - नाथ! नास्मिसाधुवादभाजनमहम्। धर्म एवायं नारीणां यदात्मप्राणेश्वरमामरणं मनोवाक्कायैः परिचर्यं परमेश्वरसदृशं मन्येत भार्या। पतिरेव परमेश्वरः स्त्रीणाम्। समासतः सर्वस्वमेवासौ स्वामी वर्तते खलु योषिताम्। स्वप्राणेशस्वर्गवासानन्तरममुना सहगमनं विधेयं योषया।[5]

उस समय पति सेवा ही नारियों का परमधर्म था। सप्तमी कला में ही सती होने से पहले महारानी अपनी पुत्री को 'पतिसेवा परमधर्म है' का उपदेश भी देती है - वत्से कुमुदिनी! स्त्रीणां पतिरेव देवः। सततं तस्मिन्नेव मनो निधेयम्। तदीये सुखे सुखं दुःखे दुःखं विभाव्यमिति नारीणां भूषणमिदम्। प्राणान्तेऽपि रक्षणीयं निजशीलं सहधर्मिण्या। कदापि हृदयवल्लभनिर्देशो नैवोल्लङ्घनीयः। मनोवाक्कायैरविरतं स्वहृदयेश्वरः परिचर्यो धर्मपत्न्या। कस्यापि संशयापादिकां वार्तामाकर्ण्याविमृश्यकारिणी भूत्वा न जातु त्वं दुनुया निजप्राणवल्लभम्।[6]

उस समय स्त्रियों के साथ बलात्कार की भी चेष्टा की जाती थी। क्रूरसिंह सेठ की बहु के साथ बलात्कार करने की कोशिश करता है इसलिए वह आत्महत्या कर लेती है।[7] तत्कालीन समाज में स्त्रियां राजसभाओं में भी उपस्थित होकर अपना मन्तव्य भी प्रस्तुत कर सकती थी।[8]

ईश्वरनिष्ठा -

तत्कालीन समाज में मनुष्यों की ईश्वर में बहुत श्रद्धा थी। विपत्ति के समय में सभी परमपिता परमेश्वर का स्मरण करते है।[9] सर्वप्रथम उपन्यास की प्रथम कला में ईश्वरनिष्ठा के दर्शन होते है। अपने भाई रणवीर को ढूंढता हुआ जब राजकुमार चन्द्रसिंह सघन वन में जाकर थककर बैठ जाता है तब वह कहता है - क्व गच्छामि? किं करोमि? कमात्मनो दुखं विनिवेदयामि। अये सकलपालक जगदीश्वर! किमर्थमियद् दारुणं दुःखं निपातितं मयि? भगवन! त्वमेव में शरणम्। दयालुर्भूत्वाऽत्मनोऽस्य व्यापत्तिसमाकुलस्य बालकस्य सहाय एधि।[10]

क्रूरसिंह द्वारा बन्दी बनाये जाने पर चन्द्रसिंह उससे कहता है - साक्षान्महामहनीयः परमेश्वरो रक्षिता मे।[11]

यहाँ तक दुष्ट नास्तिक क्रूरसिंह फांसी से पूर्व अपने बुरे कर्मो का पश्चाताप करते हुए प्रभु का स्मरण करता है। - आसीदद्य गलपाशदानदिनं क्रूरसिंहस्येति मरणायासौ समुद्यतोऽभवत्। नाधुना वाञ्छति जीवितुं क्रूरसिंहः। नितान्तं विरक्तमस्य मनः संसारादसारादितः। चिन्तयति निरन्तरमयमिदानीं जगदाधारं सच्चिदानन्दकन्दप्रभुम्।[12]

इस प्रकार उपन्यास मे जगह-2 पर ईश्वरनिष्ठा की अनुभूति होती है।

मनोरंजन के साधन - उस समय मनोरंजन हेतु मनुष्यों के लिए अनेकों साधन विद्यमान थें।

1. **उद्यान** -

उद्यान में जाकर भ्रमण करने से मानसिक संताप दूर हो जाता है। तत्कालीन समाज में भी लोग उद्यानों में विहार करते थे। ऐसे ही सुन्दर उद्यानों का वर्णन उपन्यास में हुआ है। सर्वप्रथम उद्यान का वर्णन प्रथम कला में मिलता है। कुमुदिनी योगिराज (चन्द्रसिंह) से कहती है कि जब मै वसन्त ऋतु के आगमन पर नगर के समीपस्थ विशाल उद्यान में अपनी सखी के साथ कुछ समय व्यतीत करने गयी थी, वही पर ही क्रूरसिंह की दुष्ट दृष्टि मुझ पर पडती है[13] तथा ग्रीष्म ऋतु आने पर जब कुमुदिनी अपनी सखियों के साथ सायंकाल में हरितलताओं से युक्त चन्द्रवती नदी के तट पर स्थित विलासोद्यान में शीतल वायु का सेवन करने जाती है, तब वहाँ पर पहले से स्थित क्रूरसिंह अपने साथियों द्वारा मेरा अपहरण कर लेता है।[14]

उपन्यास की चतुर्थी कला में कवि ने बहुत सुन्दर विलासोद्यान का वर्णन किया है , जिसकी प्राकृतिक छटा सहृदयों को मंत्रमुग्ध कर देती है- आत्मार्थमेव केवलं निर्मितमिदं विलासोद्यानं नरेन्द्रेण । अभिख्यानुरूपमेव विलासिजनहृदयानन्दप्रदमिदमुद्यानम् । बकुलतिलकरसालचम्पकाशोकपनसजम्बुजम्बीरनिम्बकदम्ब

कदलीप्रमुखविविधतरुवरा विराजन्तेऽस्मिन्नुद्यानेः। अनेकदेशोपनीतविविधवर्णसुन्दरविहंगवृन्दमण्डितानीहानेकानि विलसन्ति जालमन्दिराणि। प्रफुल्लसहस्रदलकमलानुकारिरुचिरमणिमयमुखरमणीय जलोद्गारियन्त्रनलिकालंकृतान्तारालाः पदे पदे सहस्रशःप्रोल्लासन्ति स्फटिकाश्मनिर्मिता मनोहरा दीर्घिकावतंसिकाः । यासां निर्मलसलिलाभ्यन्तरेषु नीलारुणहरितादिरागञ्जितवपुषः क्रीडन्ति कोटिशो मत्स्याः । ....क्रीडाशैलस्यानतिदसुन्दरेन्द्रनीलपद्मरागमरकतमणिमय भित्तिरेको महाश्वेतपाषाणनिबद्धो भव्यप्रासादश्चकास्ति ।[15]

इसी प्रकार क्रूरसिंह के कारागार से मुक्त रणवीर घूमते हुए किसी नगर में पहुंच जाता है तथा थककर वहाँ पर स्थित उद्यान की शीतलता में सो जाता है।[16]

2. **संगीत तथा मदिरापान -**

तत्कालीन समाज में लोगों की संगीत में भी रुचि होती थी। राजकुमारी कुमुदिनी संगीतविद्या में निपुण थी। जब वह अपने महल में वीणा के स्वर के साथ गाना गाती थी तब इसके मधुर स्वर को सुनकर समीपस्थ जन तथा पशु-पक्षी मूर्छित से हो जाते थे- आसीदियं सुशिक्षिता नरेन्द्रनन्दिनी गुर्जरदेशभाषायाम् । देववाण्यामपि परं निष्णाता । शिक्षणप्रभावेणेयं सद्गुणवती बभूव । संगीतविद्यायान्तु लब्धवर्णेयम् । निजराजमहालय चन्द्रशालामुपविश्य यदेयं वीणारवेण स्वमधुरकाकलीं मेलयन्ती मञ्जुळं गायति स्म तदा तस्या गानमाधुर्येण समीपवर्तिनो जनाः पशुपक्षिवर्गोऽपि सर्वो मूर्च्छित इवाजायत ।[17]

सप्तमी कला में भी चन्द्रसिंह को क्रूरसिंह की कैद से स्वतन्त्र कराने हेतु राजकुमार रणवीर महिलावेषधारण करके क्रूरसिंह के सेवकों को शराब का सेवन कराते हुए गाना सुनाता है। जिसके बाद सभी बेहोश हो जाते है उसके बाद रणवीर चन्द्रसिंह को वहां से भगा देता है।[18]

3. **आखेटक -**

उस समय मनुष्य वनों में जाकर जंगली जीव-जन्तुओं का शिकार करके भी मनोरंजन करते थे। उपन्यास की पंचमी कला में वर्षा ऋतु में महाराज विजयसिंह शिकार के बहाने से बाह्यवन की शोभा को देखने की इच्छा से राजकुमार चन्द्रसिंह के साथ अपने -2 घोड़ों पर बैठकर महल से निकल जाते है।[19]

कुरीतियां - तत्कालीन समाज में कुछ कुरीतियां भी विद्यमान थी। जो सभ्य समाज के लिए बिल्कुल भी अनुकरणीय नही है। जिनका निराकरण वर्तमान समाज सरकार द्वारा कर दिया गया है।

1) सतीप्रथा -

उपन्यास का अध्ययन करने से पता चलता है कि उस समय सतीप्रथा विद्यमान थी। पति की मृत्यु के पश्चात स्त्री को भी सती होना पड़ता था। इसका सर्वप्रथम उदाहरण उपन्यास की सप्तमी कला में प्राप्त होता है। महाराज विजयसिंह की मृत्यु हो जाने पर महारानी प्रभावती चन्द्रवती नदी के तट पर

महाराज की चिता के साथ अपनी चिता को सज्ज करने हेतु मन्त्रिवर को आदेश देती है।[20] इसके बाद प्रातःकाल होने पर राजमहिषी नित्यक्रियाओं को सम्पादित करके चन्द्रवती नदी के तट पर आकर सेनापति अमरसिंह को पुत्री कुमुदिनी तथा रणवीर की जिम्मेदारी अर्पित करती है।[21]उसके बाद पुत्री कुमुदिनी को पति धर्म का उपदेश देकर महाराज के साथ सती हो जाती है।

समयेऽस्मिन् काञ्चनभाजनादादाय निजदयितमस्तकमात्मवक्षसा समाजस्य सती देवीं चिताया उपरि निहितां चतुष्किकामारुरोह।[22]

इसका षोऽशी कला में भी अन्य उदाहरण प्राप्त होता है। क्रूरसिंह को फांसी देने के बाद उसके पार्थिव शरीर को शैवलिनी नदी के तट पर ले जाया जाता है। उसके समीपस्थ ही उसकी पत्नी विमला की चिता भी तैयार की जाती है- सती विमलाऽपि नद्यां संस्नाय चितां प्रदक्षिणीकृत्य समारुह्य चेमां स्वप्राणनाथमस्तकं निजोत्सङ्गे विनिधाय निषण्णवती। सकला अपि जनाः सतीं विमलां प्रणेमुः।[23] उसके बाद सती विमला रणवीर तथा चन्द्रसिंह को आशीर्वाद देकर चिता पर बैठ जाती है। चिता चारों ओर से जलने लगती है। उस समय अनेक प्रकार के वाद्ययन्त्रों को बजाया जाता है।[24]

2) **बलिप्रथा -**

उस समय में बलिप्रथा भी विद्यमान थी। उपन्यास की तृतीय कला में दुष्ट क्रूरसिंह राजकुमार रणवीर को बलि देने हेतु चण्डी देवी के समक्ष लाता है। वह देवी का अन्धभक्त है। वह कहता है - ''कियत्कालानन्तरमेव चण्डिकायै त्वामुपहरिष्यामि।[25]

जब क्रूरसिंह का नायिका कुमुदिनी द्वारा प्रणयनिवेदन तिरस्कृत कर दिया जाता है, तब क्रूरसिंह चण्डी देवी के समक्ष उसको और अपनी पत्नी विमला को बलि देने हेतु गुप्तगृह मे ले जाता है। बलि से पूर्व कुमुदिनी को सज्ज किया जाता है- क्रूरसिंहनिर्देशमुपश्रुत्य पूजकः पूजासामग्रीरादाय कुमुदिनीसमीपमागतवान्। एष कुमुदिनीललाटमानर्चं कुङ्कुमेन। कण्ठे चास्या रक्तकर्णिकारपुष्पमालामासञ्जयामास। अथानया देवीमूर्तिपूजां कारयाञ्चकार। अवसिते पूजाविधौ कुमुदिनीमकथयदसौ- वनिते! परमेश्वराभ्यर्थनं विधेयञ्चेद् विधेहि सम्प्रति। परतो देवीबलिदानं ते करिष्यामो वयमिति।[26]

3) **सुरापान -**

उस समय सुरापान का भी प्रचलन था। जब राजकुमार चन्द्रसिंह को क्रूरसिंह अपनी कैद में कर लेता है, तब रणवीर स्त्रीवेष धारण करके क्रूरसिंह के सेवकों को शराब का सेवन कराता है। क्रूरसिंह का सेवक अरुणसिंह शराब सेवन के पश्चात् तुतलाता हुआ कहता है - स ---- स----- सत्यमुच्यते। पि-----पि------पि प्रियतमया सत्यमुच्यते। की-------की------कीदृशस्य सौन्दर्यम्?[27]इस प्रकार दोनों सेवकों की मदिरापान के बाद आवाज लडखडाने लगती है। जब दोनों बेहोश हो जाते तब रणवीर चन्द्रसिंह को वहां से मुक्त कर देता है।

दण्डविधान -

तत्कालीन समाज में दुराचारियों को दण्ड भी दिया जाता था, जिससे सभी को कुछ सीख मिलती थी। क्रूरसिंह द्वारा किये गये पापों की उसको सजा दी जाती है। उपन्यास की पंचदशी कला में क्रूरसिंह को सजा देने हेतु विजयनगर में बहुत बड़ी राजसभा का आयोजन किया जाता है। राजसभा में नगर के प्रतिष्ठित पुरुष भाग लेते है। सभी की सहमति से क्रूरसिंह के पापों को देखते हुए उसे दण्ड के रुप में फांसी की सजा सुनायी जाती है। जिसको सुनकर सभी नगरवासी प्रसन्नचित हो जाते है।

त्वया घोरं कपटजालं कृतमभूत। अतिभयंकराश्च मन्तवो विहितास्त्वया। तदीदृशामक्षम्याणामपराधानां शासनत्वेन केवलं गलपाशदण्ड एवाज्ञाप्यते ते। क्रूरसिंह! इतस्तृतीयेऽहनि मध्यन्हिने चन्द्रवतीतरंगिणीतीरभुवि गलपाशस्ते दास्यते।[28]

परस्पर प्रेम भावना -

तत्कालीन समाज में रिश्तों में परस्पर प्रेम था। सभी एक-दूसरे का ध्यान रखते थे। इसका प्रथम उदाहरण उपन्यास की प्रथम कला में मिलता है। भयंकर गर्मी से पीडित एक युवक (चन्द्रसिंह) अपने भाई को ढूंढता हुआ भयानक वन में आता है।[29] राजकुमार चन्द्रसिंह अपने साथ भाई रणवीर को लेकर ही आश्रयस्थल पर जाता है। वह बार-2 प्रभु को याद करता है तथा दुष्ट क्रूरसिंह का वध करने का प्रण लेता है। यहां पर भातृप्रेम की प्रतीति हो रही है।

इसी प्रकार उपन्यास की दशमी कला में जब क्रूरसिंह कुमुदिनी का पुनः अपहरण कर लेता है, तब प्रियतमा कुमुदिनी के प्रेम में राजकुमार चन्द्रसिंह राज्यत्याग करके उसको ढूंढते हुए वन में चला जाता है।[30] तथा मन्त्री प्रतापसिंह द्वारा अन्य सुन्दर स्त्री के लाने की बात को सुनकर चन्द्रसिंह क्रोधित हो जाता है तथा अपने आप को पत्नीव्रतधारी पुरुष बताता है।[31]यहा पर चन्द्रसिंह का भार्याप्रेम प्रकट हो रहा है। इस प्रकार के उदाहरण उपन्यास के अन्य स्थलों पर भी प्राप्त हो जाते है।

निष्कर्ष-

इस प्रकार आचार्य मेधाव्रत प्रणीत 'कुमुदिनीचन्द्र' उपन्यास का सामाजिक मूल्यांकन करने पर ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में अपराधियों के लिए दण्ड का प्रावधान था। उस समय में परस्पर रिश्तों में मधुरता थी। विपत्ति आने पर सभी एक-दूसरे की सहायता हेतु तत्पर रहते थे यद्यपि नारी स्थिति में थोड़ी ओर सुधार की आवश्यकता थी। फिर भी नारियां राजसभा में उपस्थित होकर अपना मन्तव्य भी प्रस्तुत कर सकती थी तथा अपने पति की सहायता हेतु तत्पर होकर अर्धांगिनी पद को सार्थक करती थी । महिलाओं पर कुदृष्टि रखने वालों के लिए कठोर दण्ड का प्रावधान था। उस समय विशेष प्रकार की कारागारों, सुरंगों का भी निर्माण किया जाता था। तत्कालीन समाज में किसी भी शुभकार्य को करने से पहले मुहूर्त देखने का विधान था। उस समय अपने पद का दुरूपयोग तथा छल कपट से किसी भी कार्य को करना सामान्य था। बलि प्रथा, सति प्रथा जैसी कुरीतियाँ निरंतर बढ़ती जा रही थी, जो सभ्य समाज के निर्माण हेतु अनुपयुक्त थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

- **कुमुदिनीचन्द्र**- आचार्य मेधाव्रत, प्रकाशन वर्ष- 1996, प्रकाशक - हरियाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल झज्जर, हरियाणा।

---

[1] कुमुदिनीचन्द्र, प्रथम कला, पृ. सं. 13

[2] कुमुदिनीचंद्र, प्रथम कला, पृo संo 4

[3] कुमुदिनीचन्द्र, चतुर्थी कला, पृo 46

[4] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृ.सं. 90

[5] कुमुदिनीचन्द्र, पंचदशी कला, पृo 202

[6] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृo 89, 90

[7] कुमुदिनीचन्द्र, पंचदशी कला, पृo 200

[8] कुमुदिनीचन्द्र, पंचदशी कला, पृo 199

[9] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृo 92

[10] कुमुदिनीचन्द्र, प्रथम कला, पृo 2

[11] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृo 94

[12] कुमुदिनीचन्द्र, षोडशी कला, पृo 207, 208

[13] कुमुदिनीचन्द्र, प्रथमा कला, पृo 11

[14] कुमुदिनीचन्द्र, प्रथमा कला, पृo 13

[15] कुमुदिनीचन्द्र, चतुर्थी कला, पृo 37 – 38

[16] कुमुदिनीचन्द्र, नवमी कला, पृo 117

[17] कुमुदिनीचन्द्र, चतुर्थी कला, पृ. सं. 39

[18] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृ.सं. 99-100

[19] कुमुदिनीचन्द्र, पंचमी कला, पृ. सं. 67

[20] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृ. सं. 88

[21] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृ. सं. 88, 89

[22] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृ.सं. 90

[23] कुमुदिनीचन्द्र, षोऽशी कला, पृ. सं. 212

[24] कुमुदिनीचन्द्र, षोऽशी कला, पृ. सं. 212

[25] कुमुदिनीचन्द्र, तृतीय कला, पृ. सं. 28

[26] कुमुदिनीचन्द्र, चतुर्दशी कला, पृ.सं. 186

[27] कुमुदिनीचन्द्र, सप्तमी कला, पृ. सं. 102

[28] कुमुदिनीचन्द्र, पंचदशी कला, पृ. सं. 201

[29] कुमुदिनीचन्द्र, प्रथम कला, पृ. सं. 133

[30] कुमुदिनीचन्द्र, दशमी कला, पृ.सं. 136

[31] कुमुदिनीचन्द्र, दशमी कला, पृ.सं. 137